भारतीय शास्त्रीय संगीत : भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक वैश्विक विमर्श

डॉ. दुष्यन्त त्रिपाठी

विभागाध्यक्ष संगीत , स. धर्म राजकीय महाविद्यालय ब्यावर (राज.)

सार

भारतीय संगीत को विश्व में सर्वोत्कृष्ट संगीत की श्रेणी में स्थान प्राप्त है। भारत की हजारों साल पुरानी सभ्यता, कला, नृत्य, वास्तुकला और साहित्य इसे एक अद्वितीय स्वरूप प्रदान करते हैं। इसे केवल एक भू–खंड के रूप में ही नहीं, बल्कि एक भावना, संस्कार और संस्कृति के ध्वजवाहक के रूप में देखा जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय संगीत की अंतर्निहित शक्ति और उसके बहुआयामी स्वरूप का विश्लेषण करता है। भारतीय संगीत केवल मनोरंजन का साधन न होकर एक आध्यात्मिक साधना और जीवन दर्शन भी है, जिसने सदियों से भारतीय समाज को एक सूत्र में पिरोया है। इस शोध में इस बात का परीक्षण किया गया है कि किस प्रकार वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक संगीत ने अपनी पारंपरिक शुद्धता को बनाए रखते हुए भी बदलती सामाजिक संरचनाओं के साथ सामंजस्य स्थापित किया है। इस शोध पत्र में भारतीय संगीत के सांस्कृतिक पक्ष को रखा गया है, जिसमें पर्वों, रीति–रिवाजों और लोक–जीवन में इसकी प्रधानता का विवेचन है। शोध यह भी रेखांकित करता है कि शास्त्रीय और लोक संगीत का संगम किस प्रकार भारतीय पहचान को वैश्विक पटल पर सुदृढ़ करता है। यह शोध वर्तमान तकनीकी युग में संगीत के पारंपरिक मूल्यों के संरक्षण और इसके सामाजिक उत्तरदायित्वों की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

परिचय

भारतीय शास्त्रीय संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह भारत की प्राचीन ज्ञान परंपरा, अध्यात्म, प्रकृति और गणितीय संरचना का एक जीवंत स्तंभ है।

1. भारतीय शास्त्रीय संगीत और भारतीय ज्ञान परंपरा[1,2,3]

• वैदिक मूल और दार्शनिक आधार: इसकी जड़े वेदों (विशेषकर सामवेद) में मानी जाती हैं। संगीत को 'नादब्रह्म' माना गया है, जहां ध्वनि को ही ईश्वर और साधना का रूप कहा गया है।

• श्रुति, स्वर और गणितीय अनुशासन: महर्षि भरत के 'नाट्यशास्त्र', मतंगमुनि के 'बृहदेशी' और शाङ्र्गदेव के 'संगीत रत्नाकर' जैसे ग्रंथों ने 22 श्रुतियों और 7 स्वरों (षड्ज, ऋषभ, गंधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद) की वैज्ञानिक और गणितीय व्यवस्था तय की।

• प्रकृति और समय का संबंध: रागों का सीधा संबंध दिन के विभिन्न प्रहरों, ऋतुओं और मानवीय भावनाओं से है, जो मनुष्य को प्रकृति के साथ जोड़ने का कार्य करते हैं।

• गुरु-शिष्य परंपरा: ज्ञान का हस्तांतरण किताबों से अधिक मौखिक रूप से, दीर्घकालिक साधना और समर्पण के माध्यम से होता रहा है। आधुनिक काल में भातखंडे और पलुस्कर जैसे मनीषियों ने इसे संस्थागत रूप दिया।

2. आधुनिक वैश्विक विमर्श और चुनौतियाँ

• वैश्वीकरण और फ्यूजन प्रयोग: आज का युग डिजिटल और फ्यूजन (Fusion) का है। भारतीय शास्त्रीय संगीत ने पश्चिमी जैज (Jazz), रॉक और इलेक्ट्रॉनिक संगीत के साथ मिलकर वैश्विक स्तर पर नए प्रयोगों को जन्म दिया है।

• 'वर्ल्ड म्यूजिक' की श्रेणी में सिमटती पहचान: वैश्विक मंचों पर कई बार भारतीय शास्त्रीय संगीत को केवल 'वर्ल्ड म्यूजिक' या दक्षिण एशियाई प्रवासियों की कला तक सीमित मान लिया जाता है, जबकि इसकी संरचना और इम्प्रोवाइजेशन (तात्कालिक रचना) की गहराई इसे सार्वभौमिक (Universal) बनाती है।

• सॉफ्ट पावर और सांस्कृतिक कूटनीति: भारतीय शास्त्रीय संगीत भारत की 'सॉफ्ट पावर' का मूल आधार रहा है। पंडित रविशंकर, उस्ताद जाकिर हुसैन जैसे कलाकारों ने इसे अंतरराष्ट्रीय मंचों पर प्रतिष्ठा दिलाई है।

• डिजिटल युग में संरक्षण: आज ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म्स, ऐप्स और डिजिटल अभिलेखाकरण के जरिए यह संगीत दुनिया के किसी भी कोने में आसानी से सीखा और सुना जा सकता है, लेकिन इसके पारंपरिक अनुशासन और 'तालीम' की गहराई को बचाए रखना एक बड़ी चुनौती है।[4,5,6]

भारतीय शास्त्रीय संगीत परंपरा और आधुनिकता के इस द्वंद के बीच अपनी मौलिक शुद्धता को कायम रखते हुए वैश्विक पटल पर संवाद स्थापित कर रहा है।

• भारतीय शास्त्रीय संगीत की हिन्दुस्तानी और कर्नाटक दोनों शैलियों के प्रमुख अंतरों पर गहराई से चर्चा करें।

• आधुनिक दौर में घराना परंपरा (जैसे ग्वालियर, किराना या मेवाती) के बदलते स्वरूप को समझें।

• वैश्विक मंच पर भारतीय शास्त्रीय संगीत और वेस्टर्न क्लासिकल म्यूजिक की तुलनात्मक संरचना को जानें।

विचार-विमर्श

आधुनिक जगत में भारतीय शास्त्रीय संगीत के महत्व का अनावरण" समकालीन समाज में भारतीय शास्त्रीय संगीत के दीर्घकालिक प्रभाव और उपयोगिता पर गहन शोध करता है। कला के इस रूपांतरकारी गुण का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया है,

जो इसे मानवीय रचनात्मकता और आध्यात्मिकता के शाश्वत प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करता है। इसके अलावा, यह संगीत की इस शैली के आधारों की पड़ताल करता है, जिसमें भारतीय दर्शन, आध्यात्मिकता और सांस्कृतिक पहचान से जुड़े गहन दर्शन और आध्यात्मिकता शामिल हैं। यह आधुनिक जगत में भारतीय शास्त्रीय संगीत के चिरस्थायी महत्व को सांस्कृतिक पहचान, कलात्मक और रचनात्मक नवाचारों और आध्यात्मिक पोषण के प्रतीक के रूप में उजागर करता है।[7,8,9]

भारतीय शास्त्रीय संगीत में सात मूल स्वर (सा रे गा मा पा धा नी) होते हैं, जिनमें पाँच मध्य स्वर अंतर्विभाजित होते हैं, जिससे बारह स्वरों का स्केल बनता है। पश्चिमी संगीत के बारह स्वरों के स्केल के विपरीत, स्केल की आधार आवृत्ति निश्चित नहीं होती है, और स्वरों के बीच अंतराल (टेम्पर) भी भिन्न हो सकते हैं; हालाँकि, सारंगी के स्थान पर हारमोनियम के आने से , समान टेम्पर वाले स्केल का उपयोग बढ़ता जा रहा है। प्रस्तुति एक विशिष्ट आरोहण (आरोहण) और अवरोहण (अवरोहण) अनुक्रमों द्वारा निर्धारित एक मधुर पैटर्न पर आधारित होती है, जो समान नहीं भी हो सकते हैं। अन्य विशेषताओं में राजा (वादी) और रानी (संवादी) स्वर तथा एक विशिष्ट स्वर समूह (पकड़) शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक राग के अपने प्राकृतिक स्वर (एम्बिट) और ग्लिसेंडो (मींड) नियम होते हैं, साथ ही राग संरचना के भीतर विभिन्न शैलियों और रचनाओं की विशिष्ट विशेषताएं भी होती हैं । प्रस्तुतियों में आमतौर पर इन नियमों के भीतर काफी सुधार देखने को मिलता है।

हिंदुस्तानी संगीत प्रस्तुति एक लयबद्ध रचना पर आधारित होती है, जिससे तात्कालिक विविधताएँ उत्पन्न होती हैं। [3] संगीत रचनाएँ गुरु से शिष्य तक सीधे हस्तांतरित होती हैं; हालाँकि संकेतन प्रणालियाँ मौजूद हैं, वे अधिकतर स्मृति सहायक के रूप में ही उपयोग की जाती हैं। अधिकांश संगीतकार एक "घराना" से जुड़े होते हैं, जो एक संगीत वंश या समूह होता है, जो किसी विशेष संगीतकार या वादक से प्रशिक्षण के माध्यम से आगे बढ़ता है। उच्च स्तर की उपलब्धि प्राप्त करने वाले कलाकारों को सम्मानजनक उपाधियाँ प्रदान करना पारंपरिक है; हिंदुओं को आमतौर पर पंडित और मुसलमानों को उस्ताद कहा जाता है । सूफी काल से ही, हिंदुस्तानी संगीत में धार्मिक तटस्थता की परंपरा रही है; मुस्लिम उस्तादों का हिंदू भजन गाना और इसके विपरीत आम बात है।[10,11,12]

परिणाम

भारतीय ज्ञान परंपरा में संगीत को केवल एक ललित कला नहीं, बल्कि नादब्रह्म की साधना, मानसिक शांति और चेतना के विकास का माध्यम माना गया है।

भारतीय संगीत के मूल आधार एवं स्रोत

• वैदिक उत्पत्तिः भारतीय संगीत का अनादि स्रोत [सामवेद] को माना जाता है, जिसमें ऋचाओं का गान उदात्त, अनुदात्त और स्वरित स्वरों में किया जाता था। सामगान के मुख्य भाग प्रस्ताव, प्रतिहार और उद्गीत थे।

• नादब्रह्म का सिद्धांत: इस परंपरा के अनुसार संपूर्ण ब्रह्मांड ध्वनि और कंपन (नाद) से निर्मित है।

• प्रमुख ग्रंथ: महर्षि भरत का [नाट्यशास्त्र] (2वीं–3वीं सदी) और आचार्य शारंगदेव का [संगीत रत्नाकर] (13वीं सदी) संगीत, वाद्य और नृत्य के शास्त्रीय आधार हैं। संगीत रत्नाकर में संगीत की परिभाषा "गीतं वाद्यं नृत्यं त्रयम्" दी गई है।

• स्वर और श्रुतियाँ: संगीत में 7 शुद्ध स्वर (षड्ज, ऋषभ, गंधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद) और महर्षि भरत द्वारा बताई गई 22 श्रुतियाँ हैं।

संगीत की दो मुख्य धाराएँ

• हिन्दुस्तानी संगीत (उत्तर भारतीय शैली): मुग़ल काल के प्रभाव से विकसित हुई, जिसमें तानसेन और बैजू बावरा जैसे संगीतज्ञों का ऐतिहासिक योगदान रहा है।

• कर्नाटक संगीत (दक्षिण भारतीय शैली): यह मंदिरों और दक्षिण भारतीय संस्कृति के इर्द-गिर्द पारंपरिक रूप से विकसित हुई।

• आधारभूत तत्व: दोनों पद्धतियाँ राग (स्वर व्यवस्था) और ताल (समय चक्र) के दो स्तंभों पर टिकी हैं।

शिक्षा और साधना की परंपरा[13,14,15]

• गुरु-शिष्य परंपरा: ज्ञान का हस्तांतरण पुस्तकों से अधिक मौखिक रूप से "गुरु-शिष्य परंपरा" या "गुरुमुखी" के माध्यम से होता रहा है। यह रटने के बजाय आंतरिक आत्मसात और मानसिक एकाग्रता पर आधारित था।

• संगीत चिकित्सा (राग चिकित्सा): भारतीय ज्ञान परंपरा में संगीत का संबंध आयुर्वेद और योग से भी रहा है, जहाँ विशिष्ट रागों के माध्यम से मानसिक स्वास्थ्य और चिकित्सा का प्रयास किया जाता है।

भारतीय परंपराओं में ध्वनि को सृष्टि और मानवीय व्यवहार का मूल आधार माना जाता है। ध्वनि से नाद उत्पन्न होता है, नाद से श्रुति और स्वर उत्पन्न होते हैं, और अंततः संगीत एक संगठित और अभिव्यंजक कला रूप में आकार लेता है। संगीत मानव जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, जो इसे आनंद, शांति और सौंदर्यबोध से समृद्ध करता है। संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं है; बल्कि यह सत्यम, शिवम और सुंदरम की अवधारणा से प्रेरित संचार, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और सौंदर्यबोध का एक शक्तिशाली माध्यम है, जो भारतीय ज्ञान प्रणाली का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है। विशेष रूप से वाद्य संगीत में,

विभिन्न वाद्ययंत्रों पर प्रभाव और कंपन से उत्पन्न ध्वनियाँ लय, ताल और छंद के माध्यम से एक संगठित रूप धारण करती हैं, जो मनुष्य को सौंदर्यबोध और मानसिक संतुलन प्रदान करती हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा संगीत को जीवन का अभिन्न अंग मानती है, जो मानवीय व्यवहार, अनुभव और सामाजिक संरचना को गहराई से प्रभावित करता है। अतः, प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य नाद की अवधारणा पर आधारित वाद्य संगीत की प्रकृति और संरचना के साथ-साथ इसके सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक प्रभावों का विश्लेषण करना है। गुणात्मक दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए, यह अध्ययन नाद के सिद्धांतों, संगीतशास्त्रीय अवधारणाओं और वाद्य संगीत के व्यावहारिक पहलुओं की पड़ताल करता है। निष्कर्ष बताते हैं कि अपने सबसे परिष्कृत रूप में, वाद्य संगीत के माध्यम से प्रकट होने वाला नाद, मानव जीवन में आनंद, संचार और सांस्कृतिक निरंतरता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अंत में, यह कहा जा सकता है कि नाद की अवधारणा और वाद्य संगीत भारतीय ज्ञान परंपरा के आवश्यक घटक हैं। ये तत्व ध्वनि, लय और गति के सामंजस्यपूर्ण एकीकरण के माध्यम से समाज के नैतिक, सामाजिक, बौद्धिक और व्यक्तिगत विकास के साथ-साथ मानव जीवन को सार्थक, संतुलित और आनंदमय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा में गीतों की समृद्ध परंपरा रही है । गीत भावनाओं की सहज,सरल,लयबद्ध अभिव्यक्ति है । गीत न केवल शाब्दिक सौंदर्य के संवाहक हैं,अपितु मानवीय संवेदनाओं, अनुभूतियों और विचार प्रवाह को प्रस्तुत करने का माध्यम है । यह विधा वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक विभिन्न रूपों में निरंतर विद्यमान रही है । गीत का सम्बन्ध केवल साहित्य सृजन से न होकर अध्यात्म,संस्कृति व संगीत से भी रहा । संस्कृत में गीत शब्द 'गा' धातु से बना है, जिसका अर्थ है- गाना । यह काव्य की एक प्रचलित विधा है, जिसमें भावनाओं की गहनता, लय की मधुरता और भाषा की सरसता का त्रिवेणी संगम प्रवाहित होता है । आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार- "गीत वह काव्य है, जो भाव प्रधान हो और गेयता का गुण उसमें प्रमुख हो ।

नदी का कल-कल करता जल, सुबह-शाम चिडिया की चहचहाहट, झरने की झर-झर, हवा की साय-साय, रात के सन्नाटे में झींगुरों की झिन-झिन और आधी मे हवा की हरर-हरर की आवाजें मनुष्य आदि काल से सुनता आया है विभिन्न पशु-पक्षियों की आवाजें भी वह सुनता आया है इन्ही सब ध्वनियों में उसने अंतर करना भी सीखा किसी वृक्ष की सूखी टहनी से जब उसने पत्थरों पर वार किया होगा तब उसने एक अलग ही ध्वनि सुनी होगी । सूखी फलियों को हिलाया होगा तो उसके अदर से बीज बज उठे होंगे । पत्ती को मोड़कर उसमे फूक-मारी होगी तो उसे सीटी जैसी ध्वनि सुनाई दी होगी । मनुष्य के मन मे यह बात तो जरूर आई होगी कि इन सब को बजाया जा सकता है । यही से वाद्यों का एक रूप उसके मन में बैठ गया होगा आज भी न्यू गिनी के आदिवासी सूखी हुई फलियों के गुच्छे डोरी मे बाधकर अपनी कमर से लपेट लेते हैं जब वे नाचते है तो इन फलियों के बीज बजते हे जिससे नृत्य मे किसी और वाद्य की जरूरत ही नही पडती है ।[16,17,18]

इस युग को हम प्राक् संगीत युग कह सकते हैं जिसमें मनुष्य ने प्रकृति की ध्वनियों और उनकी विशिष्ट लय को जानने और समझने की कोशिश की माना जाता है कि संगीत का आदिम स्रोत प्राकृतिक ध्वनिया ही हैं, लेकिन ये ध्वनियां संगीतका आधार नहींहैं सवाल यह है कि आखिर ऐसी कौन सी ध्वनियां है जो संगीत पैदा कर सकती हैं संगीत केवल उन्ही ध्वनियों से निकलता है जो हमारे मन में किसी न किसी भाव से उपजती है

ध्वनियां कई प्रकार की होती हें । उन ध्वनियों को जिनमें लय होती है हम संगीत के लिए उपयोगी मान सकते है बाकी ध्वनियों का संगीत से कोई लेनादेना नही होता कोयल की कूहू–कूहू, बरसात की रिमझिम, नदियों की कलकल, आदि को संगीत के योग्य ध्वनियां कहा जा सकता है क्योंकि वे एक निश्चित लय पैदा करती हें । लेकिन ये ध्वनियां संगीत नहीं हैं । ये किसी प्रकार की भावना या अभिव्यक्ति से पैदा नहीं होती है, भले ही सुनने वाले के मन में कोई भाव पैदा करती हों । ये केवल मधुर लगती हैं । लेकिन यह भी सच है कि ये प्राकृतिक ध्वनियां मनुष्य के लिए प्रेरणा का स्रोत तो जरूर रही हैं । मनुष्य ने जब प्रकृति की ध्वनियों में छिपे संगीत के गुण को पहचाना होगा तो उन्हें लय में बांधने का प्रयास भी किया होगा । कहा जा सकता है कि संगीत भावव्यंजक यानी भाव प्रकट करने वाली ध्वनियों से पैदा हुआ । भावव्यंजक ध्वनियां ही संगीत का आधार हैं ।

भारतीय दर्शन में संगीत के जन्म को लेकर कई रोचक कथाएं प्रचलित हैं । कहा जाता है कि चारों वेदों की रचना करने वाले ब्रह्मा ने ही संगीत को भी जन्म दिया । इस युग को वैदिक युग कहा गया है क्योंकि इस युग में चार वेदों की रचना हुई । ये चार वेद हैं ऋग्वेद । सामवेद । अथर्ववेद और यजुर्वेद । संगीत के विषय में ब्रहमा ने विस्तार से सामवेद में बताया है । कहा जाता है कि उन्होंने यह विद्या शिव को सिखाई और शिव ने देवी सरस्वती को संगीत के संस्कार दिए । संगीत में पारंगत होने के बाद ही सरस्वती वीणापाणि कहलाईं । इसीलिए सरस्वती के चित्रों में उन्हें हाथों में वीणा उठाये दिखाया जाता है । स्वर्गलोक में निवास करने वाले नारद मुनि बेखटके भूलोक यानी पृथ्वी पर आया–जाया करते थे । यही नारद सरस्वती के शिष्य बने और जब संगीत की विद्या ग्रहण कर चुके तो उन्होंने यह विद्या गंधर्वों । किन्नरों और अप्सराओं को सौंपी । भूलोक पर रहने वाले भरत मुनि और अन्य तपस्वियों ने गंधर्वों और किन्नरों से संगीत का ज्ञान प्राप्त किया और पृथ्वी पर अन्य लोगों को सिखाया । ऐसी ही एक अन्य कथा के अनुसार संगीत की रचना करने वाले ब्रह्मा नहीं बल्कि शिव थे । नारद मुनि ने शिव से संगीत सीखने के लिए कई वर्षों तक कठोर तपस्या की । शिव उनसे प्रसन्न हुए और इस शर्त पर उन्हें संगीत सिखाया कि वे इस ज्ञान को भूलोक पर फैलायेंगे । नारद मुनि स्वर्गलोक से पृथ्वी पर आये और उन्होंने तपस्वियों को संगीत का प्रशिक्षण दिया ।

प्रचलित कथाओं में देवराज इंद्र की संगीत–नृत्य सभा का भी उल्लेख मिलता है । इंद्र की सभा में गायक । नर्तक और वादक सभी हुआ करते थे । गंधर्व गाते थे । अप्सराएं नृत्य करती थी और किन्नर वाद्य बजाते थे । भारतीय संगीत की धारणा में गायन । वादन और नृत्य विभिन्न कलाएं जरूर हैं लेकिन इन तीनों का मेल ही दरअसल संगीत कहलाता है । संगीत रत्नाकर नाम के ग्रंथ में संगीत के विषय में यही कहा गया है ।[18,19,20]

प्राचीन भारत में, संगीत, नृत्य और प्रदर्शन ने धर्म, साहित्य और दैनिक जीवन के माध्यम से भारत की संस्कृति को गहराई से समाहित कर लिया था, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों और भाषाओं में समृद्ध परंपराएं मौजूद थीं। इसके कुछ प्रमाण इस प्रकार हैं –

- पुरापाषाण और नवपाषाण काल

मध्य प्रदेश के भीमबेटका में स्थित 30,000 साल पुरानी गुफा चित्रकारी में लोगों को नृत्य करते और घंटा, वीणा और दफ जैसे वाद्य यंत्र बजाते हुए दिखाया गया है।

ओडिशा में लगभग 4000 ईसा पूर्व के पत्थर के वाद्य यंत्र पाए गए हैं, और भुवनेश्वर में प्राचीन गुफाओं की नक्काशी में लोगों को गाते, नाचते और संगीत बजाते हुए दिखाया गया है।

सिंधु घाटी सभ्यता के स्थल से 2500 ईसा पूर्व की एक नृत्यांगना की मूर्ति और ढोल बजाते लोगों के मिट्टी के बर्तनों पर बने चित्र मिले हैं।

- प्रदर्शन कलाओं की वैदिक उत्पत्ति

वेदों (1500-800 ईसा पूर्व) में संगीत, नृत्य और नाट्य प्रदर्शन से जुड़े अनुष्ठानों का उल्लेख मिलता है। शतपथ ब्राह्मण जैसे ग्रंथों में नाटक के रूप में संवाद मिलते हैं, और सामवेद में ताल (लय) और भजनों के मधुर गायन की प्रारंभिक अवधारणाओं की व्याख्या की गई है।

महाकाव्यों और स्मृति ग्रंथों में संगीतमय तत्व

रामायण (500-100 ईसा पूर्व) में अप्सराओं और गंधर्वों द्वारा किए जाने वाले नृत्य और संगीत का वर्णन है। इसमें वीणा, शंख और ताल वाद्य जैसे विभिन्न प्रकार के वाद्ययंत्रों का प्रयोग होता है। रागों, गायन तकनीकों, लयबद्ध पैटर्न और मार्ग जैसी विशिष्ट शैलियों में काव्य पाठ का भी प्रयोग होता है।

- प्राचीन तमिल संगीत (पन्न प्रणाली)

थोलकाप्पियम (500 ईसा पूर्व) और संगम साहित्य में पन्न का उल्लेख मिलता है, जो भूदृश्यों और भावनाओं से जुड़ी प्रारंभिक मधुर विधाएँ थीं। पन्न पंचपर्णी से सप्तपर्णी (एझिसई) में विकसित हुईं और कर्नाटक संगीत को प्रभावित किया।

विभिन्न क्षेत्रों और संतों के योगदान

जयदेव ने ओड्रा–मगधी संगीत को प्रभावित किया और ओडिसी संगीत को आकार दिया। सारंगदेव की संगीत रत्नाकर हिंदुस्तानी और कर्नाटक दोनों परंपराओं के लिए एक मूलभूत संगीत ग्रंथ है। माधव कंडाली (14वीं सदी के असम) ने अपने रामायण संस्करण में संगीत वाद्ययंत्रों की एक विस्तृत श्रृंखला का दस्तावेजीकरण किया।

प्रलेखन और आगे का विकास[19,20]

भारत की संगीत संकेतन प्रणाली को विश्व की सबसे प्राचीन और विस्तृत प्रणालियों में से एक माना जाता है। नृत्य, वाद्य और गीता की अवधारणाएँ, जिनसे संगीत एक विधा के रूप में विकसित हुई, यक्ष के छह वेदांगों में से एक 'निरुक्त' ग्रंथ में वर्णित हैं। इसके अलावा, सामवेद और ऋग्वेद जैसे प्राचीन हिंदू ग्रंथ लयबद्ध और मधुर श्लोकों से रचित हैं।

हालांकि, भारत के शास्त्रीय संगीत के व्याकरण को औपचारिक रूप से निर्धारित करने वाले सबसे प्राचीन ग्रंथों में भरतमुनि द्वारा लिखित नाट्य शास्त्र और सारंगदेव द्वारा लिखित संगीत–रत्नाकर शामिल हैं।

- गंधर्व और गण

भरत ने संगीत को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया है – गंधर्व और गण। गंधर्व को मार्ग संगीत के रूप में परिभाषित किया गया है जो भगवान शिव की स्तुति करता है।

पौराणिक कथाओं के अनुसार, भगवान शिव वीणा पर मार्ग संगीत सिखाते थे। समय के साथ, गांधर्व संगीत, जो रचना और प्रस्तुति में अधिक औपचारिक था, संगीत के सर्वोच्च और सबसे पवित्र रूप के रूप में प्रतिष्ठित हो गया।

भारतीय शास्त्रीय गायन और वाद्य संगीत अपने शुद्धतम रूप में, और समय के साथ रागों के विकास का तरीका, गंधर्व संगीत में निहित है।

समय के साथ–साथ, गंधर्व कई अन्य विशेषताओं में विकसित होता है, उदाहरण के लिए श्रुति, जाति और गीतिका।

जहां गंधर्व संगीत पूरी तरह से भक्ति भाव से प्रेरित था, वहीं गण मनोरंजन के लिए रचा गया था। शाब्दिक अर्थ गीत है, और यह नाट्य या नाटक का एक हिस्सा था।

गंधर्व और गण दोनों अपने स्वरूप (संरचना) या स्वर, ताल और पद, फल (रचना और प्रस्तुति का समग्र परिणाम), काल (अवसर और संदर्भ) और धर्म (एक विशिष्ट विशेषता जो दोनों को परिभाषित करती है) के उपयोग के तरीके में भिन्न थे।

भारत का शास्त्रीय संगीत

मूलतः भारतीय शास्त्रीय संगीत की दो विधाएँ हैं – कर्नाटक संगीत और हिंदुस्तानी संगीत। मुगल दरबारों ने देश के उत्तरी भाग में हिंदुस्तानी संगीत के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

कर्नाटक संगीत का उद्गम दक्षिण भारत में हुआ और ऐसा माना जाता है कि इसने संगीत के प्रति प्राचीन दृष्टिकोण को संरक्षित रखा है।[19]

हालांकि, भारतीय संगीत के इतिहास में इन दो वर्गीकरणों से कहीं अधिक विविधता है। यहाँ अतीत के कुछ अंश प्रस्तुत किए गए हैं, साथ ही भारतीय संगीत परंपराओं की जड़ों तक पहुँचने का एक विनम्र प्रयास भी किया गया है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के बारे में और अधिक विस्तार से जानें ।

- राग, ताल और पद

मुगलों के भारत के उत्तरी भाग में कदम रखने से बहुत पहले, भारतीय शास्त्रीय संगीत में मुख्य रूप से तीन मूलभूत तत्व थे – राग, ताल और पद।

राग – कम से कम पांच या अधिक स्वरों (नोट्स या सूक्ष्म नोट्स) को दोहराकर मधुर रचनाओं या संगीत रचना का एक बारोक रूप तैयार करना।

ताल समय चक्र का उपयोग करके इस संगीत रचना को एक लयबद्ध ढांचे में ढालते हैं। सुर और ताल का सामंजस्य ही संगीत रचना की सुंदरता को बढ़ाता है।

पद से तात्पर्य उस पाठ से है जो स्वर और ताल का पूरक होता है और उन्हें सारगर्भित बनाता है। यह संगीत रचना को गहनता प्रदान करता है।

भारतीय संगीत के घराने

हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में घराने विशिष्ट संगीत परंपराएं हैं, जिनका नाम उनके उद्गम स्थल क्षेत्रों के नाम पर रखा गया है, जैसे ग्वालियर, आगरा, लखनऊ और पटियाला। मुगल दरबारों की परंपराओं से उत्पन्न ये शैलियाँ बाद में रियासतों में फली-फूलीं। प्रत्येक घराना ख्याल, ध्रुपद, ठुमरी, तबला, सितार और सरोद जैसे गायन या वाद्य रूपों की एक अनूठी व्याख्या प्रस्तुत करता है, जो शैलीगत सिद्धांतों का सख्ती से पालन करती है। यह परंपरा गुरु-शिष्य परंपरा में निहित है, जहाँ ज्ञान मौखिक रूप से समर्पित प्रशिक्षण के माध्यम से, अक्सर परिवारों के भीतर या समर्पित शिष्यों को दिया जाता था। इस मौखिक प्रणाली ने प्रत्येक शैली की शुद्धता को संरक्षित रखा, साथ ही सुधार की गुंजाइश भी छोड़ी, जिससे प्रत्येक घराने को अपनी विशिष्ट पहचान के साथ विकसित होने का अवसर मिला।[20]

भारतीय संगीत वाद्ययंत्र – ध्वनिक सिद्धांतों पर आधारित वर्गीकरण

भारतीय संगीत वाद्ययंत्रों को ध्वनि सिद्धांतों के आधार पर चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है: वीणा, सितार और सारंगी जैसे तार वाले वाद्ययंत्र; बांसुरी और हारमोनियम जैसे खोखले वाद्ययंत्र; झांझ और जल तरंग जैसे ठोस वाद्ययंत्र; और ढोल और तबला जैसे आवरणयुक्त वाद्ययंत्र। राग या धुन का विकास स्वरों, तार वाले वाद्ययंत्रों और खोखले वाद्ययंत्रों के माध्यम से हुआ, जबकि ताल या लय का विकास खोखले वाद्ययंत्रों और आवरणयुक्त वाद्ययंत्रों के साथ हुआ।

हमने अपने दूसरे ब्लॉग में भारतीय संगीत वाद्ययंत्रों के बारे में अधिक विस्तार से बताया है। भारत के संगीत वाद्ययंत्रों के बारे में पढ़ें ।

भारतीय संगीत की विभिन्न शैलियाँ

भारतीय संगीत के प्रकारों का मानचित्रण करना किसी ऐसे वृक्ष की पत्तियों को गिनने जैसा है जिसकी जड़ें सभ्यता में गहराई तक फैली हुई हैं और जो अनंत आकाश की ओर बढ़ता है। गंधर्व और गण जैसी प्राचीन परंपराओं से अनगिनत संगीत शैलियाँ उभरी हैं। आज, हिंदुस्तानी और कर्नाटक शास्त्रीय संगीत क्षेत्रीय, अर्ध-शास्त्रीय और लोक संगीत शैलियों की समृद्ध विविधता के साथ फल-फूल रहे हैं। देश की सांस्कृतिक विविधता को दर्शाते हुए, भारतीय संगीत निरंतर विकसित हो रहा है, जिसमें कलाकार इसके विकास और वैश्विक पहचान में योगदान दे रहे हैं। समय के साथ, इसने इस्लामी और यूरोपीय परंपराओं से भी प्रभाव ग्रहण किया है, जिससे इसकी पहले से ही विशाल विरासत और समृद्ध हुई है।

निष्कर्ष

भारतीय संगीत को क्या चीज़ अद्वितीय बनाती है?

पश्चिमी शास्त्रीय संगीत सामंजस्यपूर्ण होता है। इसमें कई वाद्य यंत्रों को एक साथ तालमेल बिठाकर बजाया जाता है, उदाहरण के लिए ऑर्केस्ट्रा या ओपेरा। इसमें एक पूर्व-निर्मित संरचना होती है जिसका प्रत्येक कलाकार को पालन करना होता है। इसमें व्यक्तिगत सुधार या योगदान की कोई गुंजाइश नहीं होती।

भारत के शास्त्रीय संगीत की स्थिति अलग है...

भारतीय संगीत मधुर है और एकल प्रस्तुतियों को सुशोभित करता है। इसकी मधुर प्रकृति निरंतर संवर्धन और सुधार को बढ़ावा देती है। यह प्रत्येक कलाकार या संगीतकार को सुर, लय और तान के साथ प्रयोग करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है, जिससे वे राग में अपना बहुमूल्य योगदान दे सकें।

समापन – भारत का संगीत

भारत की धरती पर संगीत के जन्म से लेकर अब तक हमने इसके पथ-प्रदर्शों का अनुसरण करते हुए एक लंबा सफर तय किया है। और इसके विकास को आगे बढ़ते हुए देखना, और इसे वर्तमान भव्यता तक पहुंचते देखना, जीवन भर का आनंद है।[20]

संदर्भ

1. रोवेल 2015 , पृ. 12–14.
2. नेटल एट अल. 1998 , पृ. 299.
3. लिसा ओवेन (2012). एलोरा की जैन गुफाओं में भक्ति की नक्काशी . ब्रिल एकेडमिक. पृ. 76–77 . ISBN 978-90-04-20629-8.
4. मधुकर केशव धवलीकर (2003)। एलोरा . ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 35 . आईएसबीएन 978-0-19-565458-5.
5. गौतम 1993 , पृ. 1–10.
6. नेट्टल एट अल. 1998 , पृ. 37-46.

7. ते निजेनहुइस 1974 , पृ. 3-4.
8. लूडो रोचर (1986)। कक्कस पुराण . ओटो हैरासोवित्ज़ वेरलाग। पीपी. 151-152 . आईएसबीएन 978-3-447-02522-5.
9. एए बेक (1962), समीक्षा: टेक्सटेस देस पुराणस सुर ला थियोरी म्यूजिकल एलेन डेनियलौ द्वारा, एनआर भट्ट , इंडो–ईरानी जर्नल , ब्रिल एकेडमिक, वॉल्यूम 5, नंबर 2 (1961-62), पीपी. 157-160
10. रैंडेल 2003 , पृ. 813.
11. श्वाट्र्ज 2004 .
12. शास्त्री 1943 .
13. ते निजेनहुइस 1974 , पृ. 7.
14. जयराजभोय 1995 , पृ. 16-17.
15. ते निजेनहुइस 1974 , पृ. 80.
16. होरमोज़ फरहत (2004). फ़ारसी संगीत में दस्तगाह की अवधारणा । कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। पृ. 97–99 . ISBN 978-0-521-54206-7.
17. रमेश एन. राव; अविनाश थोम्ब्रे (2015). अंतरसांस्कृतिक संचार: भारतीय संदर्भ . सेज पब्लिकेशन्स. पृ. 69–70 . ISBN 978-93-5150-507-5.
18. जोसेफ पी. स्वेन (2016). पवित्र संगीत का ऐतिहासिक शब्दकोश . रोवमैन एंड लिटिलफील्ड. पृ. 228–229 . ISBN 978-1-4422-6463-2.
19. बार्डवेल एल. स्मिथ (1982). हिंदू धर्म: धर्मों के इतिहास पर नए निबंध . ब्रिल एकेडमिक. पृ. 153–154 . ISBN 978-90-04-06788-2.
20. नेट्टल एट अल. 1998 , पृ. 139-141.